Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XI, Issue No. 22, July-2016, ISSN 2230-7540

उच्च प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर छात्र / छात्राओं के व्यक्तित्व विकास हेतु शिक्षको का योगदान

Usha Kumari[1]* Dr. Seema Pandey[2]

[1]Research Scholar, Satya Sai University, Shehore

[2]Dean

सारांश – शिक्षक एक जीवंत आदर्श एवं ज्ञानपथ का सतत् एवं अनवरत चलने वाला पाथेय तथा ज्ञान धारा का अजस्त्र स्रोत है। शिक्षक मानवता का निर्माता तथा समाज का शिल्पी है। एक अच्छा शिक्षक न सिर्फ कक्षा व स्कूल का वातावरण बदल सकता है। अपितु सामाजिक रुढ़ियों का उन्मूलन करके समाज में सुधार लाने की हवा भी निर्मित कर सकता हैं।

शिक्षा का प्रथम एवं शाश्वत धर्म है ऐसी मानव संतति का सृजन करना जो नवीन के प्रति जिज्ञासु होए जिसमें ग्राह्यता का भाव हो, सृजनधर्मी, चिंतन, भविष्योन्मुख, मननशील हो साथ ही ऐसे मस्तिष्क का निर्माण करना जो स्वच्छ आलोचना करना तथा लक्ष्यों का सत्यापन करने में सक्षम हो, सत्य, असत्य में विभेद करने की विवेक क्षमता से युक्त हो। महान दार्शनिक जॉ प्याजे का कथन मार्गदर्शक का कार्य कर सकता है–''जब हम होने के लिए सीखने के स्थान पर निर्माण के लिए सीखने की शिक्षा प्राप्त करेंगे तभी जीवन पर्यन्त शिक्षा के सारत्व को मूर्त रुप प्रदान कर सकेगा।''

----------X----------

प्रस्तावना

विद्यालय शिक्षा का मंदिर है जहाँ विद्यार्थी विषयों का ज्ञान प्राप्त करते हैं । साथ ही जीवन, तथा अन्य ज्ञानार्जन भी करते हैं। इसमें प्रमुख भूमिका निभाता है शिक्षक। कच्ची मिट्टी से जैसे एक कुम्हार मनचाही डिजाइन के बर्तन, खिलौने, मूर्तियाँ आदि तैयार करता है उसी प्रकार अबोध, अज्ञान, नादान बालक को अपनी योग्यता क्षमता एव ं कुशलता के बल पर आदर्श नागरिक बनाने का काम शिक्षक कर सकता है।

अध्यापक की भूमिका बडी महत्वपूर्ण होती है – वह ''तमसो मा ज्योतिर्गमय का अलख जगाता है व अज्ञान का नाश करके ज्ञान का समावेश करता है, वह छात्रों में सुबुद्धि की धारा बहाता है जिससे वे सत–असत की पहचान कर सकें। वह सदाचार की प्रेरणा देता है। जिस प्रकार लोहे का जंग लगा हुआ टुकड़ा मिस्त्री के हाथों मशीन का पुर्जा बनकर और खराद चढ़कर चम चमाने लगता है उसी प्रकार ज्ञान रहित तथा गुणहीन बालक अध्यापक के हाथ से ज्ञानवान एवं गुण सम्पन्न बन जाता है ।

बच्चों में जीवन मूल्यों के विकास हेतु ज्यादा सिखाना जिससे उनमें निम्न गुणों का विकास होता है भरोसेमंदी, विश्वसनीयता, गहराई, निंश्चिंतता, परवाह, करना, चरित्र निर्माण का अहसास, निष्ठा, उत्तरदायित्व, वफादारी, ईमानदारी, साहस आदि। आखिर क्यों होता है एक शिक्षक विद्यालय में? इसका उत्तर है समय पर विद्यार्थियों को याद दिलाना किसे करना है? कब करना है? क्या करना है? कितना करना है? क्यों करना है?

साहित्य की समीक्षा

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा में सम्पूर्ण सुधार की आवश्यकता अनुभव की गई जिसमें अनेक आयोगों ने अपने सुझाव दिए जिनमें सभी ने विभिन्न तरीकों से शिक्षको के उत्तरदायित्वो पर बल दिया। शिक्षको की जबाबदेही शिक्षकों के कार्य मूल्याकंन से संबंधित होती है। जहाँ तक शिक्षकों की अपने व्यवसाय के प्रति जबाबदेही का प्रश्न है जबाबदेही के सम्पत्यय को व्यापक रुप से समझना होगा। शक्षक या गुरु शब्द स्वयं में उत्तरदायित्व या जबाबदेही को परिभाषित करता है। विभिन्न कालों में शिक्षको के उत्तरदायित्व का स्वरुप भिन्न रहा।6–10 वैदिक काल में गुरुओं की यह जिम्मेदारी मानी जाती थी कि वे शिक्षण के समय वाक्, मन, विचार, चिंतन, स्मृति, विश्वास तथा अन्य मानसिक क्रियाओं को अपने विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत करें। उस काल में गुरू की जिम्मेदारी यह भी थी कि आचार संबंधी शिक्षा दी जायें केवल पुस्तक ज्ञान ही नहीं। संक्षेप में वैदिक काल में गुरूओं के दायित्वों को निम्नांकित रूपों में देखा जा सकता है:–

- पवित्र ऋचाओं का समारक्षण करना ।
- सामाजिक, नैतिक तथा धार्मिक तत्वों का भाष्य करना ।
- शिष्यों तथा समाज के समक्ष स्वयं आदर्श प्रस्तुत करना।

मध्यकाल में अधिकांश समय मुगलों का आधिपत्य भारत पर रहा। उन्होंने धार्मिक शिक्षा पर बल दिया। शिक्षा व्यवस्था राजा की प्रकृतिनुरूप तय की जाने लगी । उस समय शिक्षा की जबाबदेही केवल बादशाह के प्रति मानी जा सकती थी।

www.ignited.in

आधुनिक काल के प्रारंभ मे शिक्षा व्यवस्था अग्रेंजों के शासन काल से संबंधित है। इस काल में औपचारिक शिक्षा संस्थाओं की स्थापना की गई । लार्ड मैकाले की शिक्षा नीति तथा शिक्षा के नियंत्रण सिद्धांत का मुख्य उद्देश्य भारतीयों का उपयोग अपने शासन व्यवस्था को चलाने के लिए करना था । अतः शिक्षको के दायित्व बोध का प्रश्न महत्वपूर्ण नहीं था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षा के क्षेत्र पर सर्वाधिक ध्यान दिया गया। देश की बिखरी शिक्षा व्यवस्था को एक सूत्र के नीचे लाने का प्रयास किया गया। इसी के तहत् अनेक आयोगों, समितियों व शिक्षा नीतियों का गठन व निर्माण किया गया जिसमें प्रमुख है–

- मुदालियर शिक्षा आयोग (1952–53)
- कोठारी शिक्षा अयोग (1964–66)
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968)
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986)

सभी ने शिक्षक के दायित्वों के संबंध मे सुझाव दिये हैं। शिक्षा व्यवस्था की सफलता या असफलता का काफी कुछ दायित्व शिक्षकों पर निर्भर करता है। नई शिक्षा के अंतर्गत ''अध्यापकों की जबाबदेही'' को भी विचारणीय विषय माना गया है। दक्षता, व्यवसायिकता तथा निष्ठा की मांगे शिक्षकों पर एक बहुत अहम् दायित्व सौंपती हैं । शिक्षण व्यवसाय संसार में सर्वाधिक व्यवसायों में से एक है। शिक्षक का कार्य केवल सूचना तथा ज्ञान के प्रसार तक ही सीमित नहीं है।

आज उसकी भूमिका का क्षेत्र विस्तृत हो गया है। कि भारत की आजादी के बाद के सभी शिक्षा आयोगों नें शिक्षक के उत्तरदायित्व पर बल दिया है। अतः शिक्षक सामाजिक जिम्मेदारी से विमुख नहीं हो सकते।11–14 सेमिनार में लिया गया निर्णय निम्नवत् रहा– ''शिक्षकों को प्रोत्साहित करना चाहिए कि वे आचार संहिता के निर्धारित नियमो को ग्रहण करें।

''भारत में शिक्षण व्यवसाय का समाज शास्त्र'' था । इसमें शिक्षा के सभी पक्षों यथा शिक्षा के व्यवसायीकरण, शिक्षक प्रशिक्षण कक्षा शिक्षण, शिक्षकों के उत्तरदायित्व, शिक्षकों का वर्तमान समाज में स्थान आदि पर चर्चा की गई। कि –''शिक्षा और राष्ट्रीय उद्देश्य में घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय समाज की परिस्थितियों और व्यवस्थाओं में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन आए उनके फलस्वरूप भारतीय शिक्षा के उद्देश्यों कार्यक्रमों और व्यवस्थाओ में भी परिवर्तन आ रहे है। इन परिवर्तनों के सदंर्भ में जब एक शिक्षक के कार्य विषय में सोचते है। तो ऐसा प्रतीत होता है कि शिक्षक अब अपने परम्परागत कार्य को ही करके अपने उत्तरदायित्व की इतिश्री नहीं समझ सकता, क्योंकि अब उसे अनेक कायों और कर्त्तव्यों को पूर्ण करना हैं । शिक्षकों के मूल्यों में आमूलचूल परिवर्तन आए बिना शिक्षकों तथा शिक्षा व्यवस्था की समस्याओं का आधुनिक सामाजिक सदंर्भ में कोई सतोंषप्रद हल नहीं निकल सकता। शिक्षकों को यह सोचना आवश्यक है15 कि वर्तमान भारतीय समाज की आवश्यकताओं और विशेषताओ के सदंर्भ में वह किस प्रकार अपने इन दोनों प्रकार के कार्यों को समन्वित ढगं से सम्पादित कर सकता है।''

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया है कि शिक्षक को अपने कार्य करने की संस्था में कम से कम 40 घंटे प्रति सप्ताह उपस्थित रहना चाहिए रस्तोगी कमेटी के अनुसार ''योग्य व्यक्तियों को ही शिक्षण व्यवसाय में लाया जाना चाहिए। शिक्षक पूरे शिक्षण तंत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अतंर्राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1972) के अनुसार –

21वीं सदी के लिए अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1996) की यूनेस्को में प्रस्तुत रिपोर्ट के अनुसार ''शिक्षण व्यवसाय विश्व के सर्वाधिक संगठित व्यवसायों में से एक है, अतः शिक्षक संगठन शिक्षा में एक व्यापक भूमिका निभा सकते हैं।''

वर्तमान परिदृश्य में शिक्षकों की जबाबदेही का समप्रत्यय अधिक महत्वपूर्ण होता जा रहा है । शिक्षा के द्धारा सम्पूर्ण समाज को दिशा प्रदान की जाती है। यह दिशा परिवर्तन कराने वाला अभिकर्ता शिक्षक है। वह अपने दायित्व बोध से युक्त है अथवा उसका अपना प्रत्यक्षण शिक्षक की गुणवता को महत्ता प्रदान करता है या नहीं यह सारे प्रश्न चिंतन का विषय हो गए हैं। इस दृष्टि से हमें यह जान लेना आवश्यक होगा कि जबाबदेही की संकल्पना क्या है? जबाबदेही सम्प्रत्यय का मूल्य इसके उद्देश्य में निहित है । किसी एक संदर्भ के विषय में चर्चा करे तो उसकी गुणवत्ता बनाए रखना एवं विकसित करना जबाबदेही का मुख्य उद्देश्य है।

नई शिक्षा नीति (1986) के अनुसार–

''किसी कार्यकर्ता द्धारा उसके कार्य के प्रति जिम्मेदारी की अभिव्यक्ति, जबाबदेही है। यह कार्यकर्ता द्धारा किए जाने वाले प्रत्याशित कार्यों की सूचक है।'' साधारण अर्थ में जबाबदेही से तात्पर्य है किसी की भी निष्पादनता का मूल्यांकन उसको सौंपे गए उत्तरदायित्व के संदर्भ में किया जाना। यह किसी सत्ता या समाज द्वारा किया जाता है।

शैक्षिक जबाबदेही से तात्पर्य विद्यालय की शैक्षिक तथा सहशैक्षिक गतिविधियों का पूर्ण जिम्मेदारी से निर्वहन करने की इच्छा शक्ति हैं। शिक्षा एक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में शैक्षिक जबाबदेही की व्युत्पत्ति इन अर्थों में है कि शिक्षक क्या करता है? वह शिक्षित करता है या मात्र अनुदेशन? शिक्षक द्वारा चयनित क्रियाऐं विद्यार्थियों की कल्पना, ज्ञान, विश्वास इच्छा एवं संवेगों से जुड़ी हैं? क्या शिक्षक की क्रियाओं का अवलोकन मात्रात्मक रूप में किया जा सकता है ?

शक्षकों के विषय में जबाबदेही के सम्प्रत्यय की विवेचना करते हुए कई प्रश्न उभर कर आते हैं, जैसे शिक्षक किसके प्रति जवाबदेह हो? वह किस बात के लिए जबाबदेह हो? प्रथम प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने से पूर्व निश्चित करना होगा कि शिक्षक के नियंत्रण में क्या है जिसके आधार पर वह अपनी जबाबदेही निर्धारित कर सके। इस बिंदु पर भिन्न–भिन्न मत है।– छात्र, समाज, राष्ट्र इन सभी के प्रति वह जवाबदेह हो। दूसरे बिन्दु पर चिंतन करने से स्पष्ट होता है कि शिक्षक की कुछ सीमाएँ है। वह विद्यार्थी में किस सीमा तक परिवर्तन ला सकता हैं। ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक क्षेत्रों में सकारात्मक परिवर्तन लाना तथा श्रेष्ठता तक पहुंचाने का प्रयास विद्यार्थी तक करना शिक्षक की जबाबदेही का एक भाग है।

www.ignited.in

जॉन पोर्टर के अनुसार –

जबाबदेही इस बात की गारंटी से सम्बन्धित है कि सभी विद्यार्थी बिना जातिगत भेद, सामाजिक स्तर की भिन्नता तथा आर्थिक स्तर के विद्यालय की सभी सुविधाओं का लाभ उठा सकें। जबाबदेही एक प्रक्रिया है उद्देश्य निर्धारण एवं उनके प्राप्त करने में उपयुक्त साधनों की उपलब्धता की तथा नियमित रूप से मूल्याकंन की पूर्व निर्धारित उद्देश्य प्राप्त हुए अथवा नहीं, इसकी ।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) के अनुसार–

''विद्यालय शिक्षा की एक महत्वपूर्ण एजेंसी है। शिक्षक का कार्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्व को इस प्रकार मोड़ना है कि वे शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ, मानसिक रूप से जागरूक, भावनात्मक रूप से स्थिर, सांस्कृतिक दृष्टि से शक्तिशाली तथा सामाजिक रूप से दक्ष बन सकें। यह तभी संभव हो सकेगा जब प्रबंधक, प्राचार्य, शिक्षक तथा अन्य कर्मचारी समुचित जबाबदेही के दायित्व को पूरा करें। इस प्रकार जबाबदेही से तात्पर्य अपने कर्तव्य निर्वाह हेतु विधिक और सैद्धान्तिक रूप से जिम्मेदार होना है।

शिक्षक समाज की धुरी है, वह एक अकादमिक तथा बुद्विजीवी व्यक्ति है। बालकों के निर्माण में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षक को वह कुम्हार माना गया है, जो गीली मिट्टी के समान बालक को वांछित आकार प्रदान कर सकता है। इस दृष्टि से प्राथमिक शिक्षा ही जीवन का वह चरण है जहाँ से बालक को वांछित आकार प्रदान किया जा सकता है। एक शिक्षक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह समर्पित भाव से कार्य करे। नई शिक्षा नीति (1986, 92) में शिक्षक से उच्च स्तरीय निष्पादनता एवं समर्पण तथा अपने व्यवसाय के प्रति प्रतिबद्धता की अपेक्षा की गई है। अनेक आयोगों यथा विश्वविद्यालय आयोग (1948), मुद्रालियर शिक्षा आयोग (1952–53), कोठारी आयोग(1964–66) तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) में भी शिक्षक के दायित्वों पर सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं। शिक्षा व्यवस्था की सफलता या असफलता का काफी कुछ दायित्व शिक्षकों पर निर्भर करता है। सक्षमता, व्यावसायिकता तथा निष्ठा की मांगे शिक्षकों पर एक बड़ा दायित्व सौंपती हैं। शिक्षण व्यवसाय संसार में सर्वाधिक व्यवस्थित व्यवसायों में से एक है। आज शिक्षक की भूमिका का क्षेत्र विस्तृत हो गया है, चाहे शिक्षा किसी भी स्तर से संबंधित हो परन्तु प्रारम्भिक शिक्षा ही जीवन का वह चरण है जहाँ से बालक के विकास की यात्रा शुरू होती है। परन्तु आज प्रारम्भिक शिक्षा के प्राथमिक स्तरीय सार्वजनीकरण के लक्ष्य प्राप्ति की आवश्यकता से इस स्तर पर शिक्षकों की जबाबदेही की ओर ध्यान आकृष्ट हुआ।

उपसंहार

शिक्षा प्रगति का द्वार है। मानव को सच्चे अर्थों में मानव बनाने वाली शक्ति शिक्षा ही है। शिक्षा मानव के सर्वांगीण विकासार्थ संजीवनी का कार्य करती है। मानव विकास के विभिन्न आयामों के सापेक्ष शिक्षा को तीन स्तरों पर विभक्त किया गया है यथा प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा एवं उच्च शिक्षा। वास्तव में प्रारंभिक शिक्षा, शिक्षा रूपी मूल का वृक्ष है, माध्यमिक शिक्षा इस वृक्ष का तना एवं उच्च शिक्षा इस वृक्ष के फूल और फल है। शिक्षा के दायित्वों को भली भांति वहन करने वाला व्यक्ति शिक्षक होता है।

शिक्षा के क्षेत्र में जबाबदेही से तात्पर्य है कि शिक्षक, प्रधानाध्यापक/प्राचार्य तथा अन्य विद्यालय कार्यकता मानित निष्पादन हेतु अभिभावकों, नागरिकों या जनता के प्रति उत्तरदायी हों। प्रारंभिक स्तर पर यह शैक्षिक उत्पाद/निष्पादन/फल या परिणाम ''शिक्षा के गुणात्मक'' उद्देश्य से संबंधित है। एक शिक्षक प्रत्यक्षतः अपनी संस्था के प्रति तथा अप्रत्यक्ष रूप से विद्यार्थियों एवं समाज के प्रति उत्तरदायी है। यह एक प्रकार से ''नई अपेक्षा (न्यू डिमांड) मानी गई है। नवीन इस रूप में कि अतीत व वर्तमान समय की शैक्षिक परिणामों की अवधारणा में अंतर आया है। नई शिक्षा नीति (1986,1992) के अनुसार – ''अपने व्यवसाय के प्रति शिक्षकों में समर्पण भाव, लगाव तथा उच्च स्तरीय निष्पादन हो।'' इससे यह प्रश्न उभर कर सामने आते हैं कि वे कौन से क्षेत्र हैं, जिनके प्रति शिक्षक जबाबदेह या उत्तरदायी हों।

अतः प्रांरभिक स्तर पर उन क्षेत्रों की पहचान करना आवश्यक है जिनमें शिक्षकों की जबाबदारी अपेक्षित है। प्रस्तुत शोध कार्य इसी दिशा में किया गया प्रयास है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

एम.देव सेनाधिपति (2001). ''ए गुड टीचर'' एजूकेशनल रिव्यू, सितम्बर। मुदालियर ए.एल. (1952–53), रिपोर्ट ऑफ सैकण्डरी एजूकेशन कमीशन, गर्वमेंट ऑफ इंडिया, न्यू देहली।

कपिल, एच.के., (2004). अनुसंधान विधियाँ (व्यवहारपरक विज्ञानों में) वेदांत पब्लिकेशन्स लखनऊ, अध्याय 12 पृ. 147–148, 368

मयाशंकर सिंह (2007). अध्यापक शिक्षा असमंजस में, अध्ययन पब्लिशर्स, न्यू देहली।

माहेश्वरी अमृता (2003). शिक्षक प्रतिबद्धता तथा अकादमिक आदर्श, प्राइमरी शिक्षकः अंक 4, अक्टूबर, एन.सी.ई.आर.टी, देहली।

हौले जायसी एंड शावर्स प्रोफेशनल डवलपमेंट ऑफ टीचर्स प्रणति जर्नल ऑफ इंडियन एजूकेशन, वाल्यूम 29 नं.3 व एन.सी.ई.आर.टी, नई दिल्ली

पुरोहित पी.एन., (2003). मैथडोलॉजी ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, मंगलदीप पब्लिशिंग जयपुर पृ. 155–156

शर्मा, गणपतराय व हरिशचन्द्र व्यास (2006). अधिगम शिक्षण एवं विकास के मनो सामाजिक आधार, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

देसाई डी (2003). प्रोफेशनल ग्रोथ ऑफ टीचर्स, पर्सपैक्टिव इन एजूकेशन (21) सोसायटी फॉर एजूकेशनल रिसर्च एंड डवलपमेंट।

नरेश कुमार (2003). बदलते सामाजिक परिप्रेक्ष्य में शिक्षा का स्वरूप और शिक्षक का दायित्व, प्राइमरी शिक्षक, अक्टूबर अंक 4, एन.सी.ई. आर.टीदेहली।

ग्लोरिया बैकोथ (1999). ''द एक्सपीरियंस ऑफ काउंसलिंग सस्टेनिंग वैलबीइंग, मै ने, यूनिवसिर्टी ऑफ न्यू फॉवरिलयन्स, पी.एच.डी.

Corresponding Author

Usha Kumari*

Research Scholar, Satya Sai University, Shehore

E-Mail – chintuman2004@gmail.com